© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 2 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

''किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में नारी के नैतिक मूल्य''

पूजा जायसवाल
शोधच्छात्रा
नेट/जे0आर0एफ0
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

जीवन व्यवस्था में नैतिक मूल्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। जीवन में संघर्ष को घटाने और सहयोग को बढ़ाने के लिए मनुष्य अपने बुद्धि–विवेक से ऐसे उदात्त नियमों, आदेशों, सिद्धान्तों, प्रमिमानों और संकल्पों की संरचना करता है, जो उसके जीवन को समुचित गति देने, मार्गदर्शन करने और समायोजन करने में सहायक होते हैं जिनके माध्यम से वह समरस एवं शान्त जीवन जीने में समर्थ हो पाता है। ऐसे नियमों को 'नैतिक मूल्य' कहा जाता है।

'नैतिक मूल्य' दो शब्दों से बना है– नैतिक और मूल्य ये दोनों संस्कृत के शब्द हैं। 'नैतिक' शब्द की उत्पत्ति 'नीति' शब्द से हुई है।

'नीति' शब्द प्रापणार्थक 'नीञ्' धातु के साथ भावार्थक 'क्तिन्' प्रत्यय के योग से बना है। 'नीञ्' धातु का अर्थ है– ले जाना या ले चलना अतः नीति शब्द का अभिप्राय है वे नियम जिन पर चलने से मनुष्य का एहिक आमुष्मिक और सनातन कल्याण हो, समाज में स्थिरता और संतुलन रहे, सब प्रकार से अभ्युदय रहे और विश्व में शान्ति रहे अर्थात् जिन नियमों का पालन करने से व्यक्ति और समाज दोनों का श्रेय हो। पूर्ण रूप से ''नीति वह शास्त्र है, जो शुद्ध तथा अशुद्ध, सत्य तथा असत्य, उचित तथा अनुचित अथवा शुभ–अशुभ के आधार पर मानव–चरित्र का विवेचन करता है।[1]

डॉ0 भोलानाथ तिवारी 'नीति' शब्द को इस प्रकार परिभाषित करते हैं– समाज को स्वस्थ एवं संतुलित पथ पर अग्रसर करने एवं व्यक्ति को धर्म, अर्थ तथा मोक्ष की उचित रीति से प्राप्ति कराने के लिए जिन विधि या निषेधमूलक वैयक्तिक एवं सामाजिक नियमों का विधान देश, काल और पात्र के संदर्भ में किया जाता है उन्हें नीति शब्द से अभिहित करते हैं।[2]

डॉ0 राधाकुष्णन के अनुसार नैतिकता का ज्ञान ही वास्तविक शिक्षा है।

[1] डॉ0 राजबली पाण्डेय, भारतीय नीतिशास्त्र का विकास पृ0 1
[2] भोलानाथ तिवारी हिन्दी नीति काव्य, पृष्ठ, 4

संक्षेप में कहा जा सकता है कि नीतिशास्त्र में उन नियमों और अनुशासनों की विवेचना की जाती है जो व्यक्ति और समाज की स्थिति के कारण भी है और लक्ष्य भी।[3] शुक्रनीति सार में भी कहा गया है।

सर्वलोक व्यवहारस्थितिः नीत्या बिना न हि।

अर्थात् नीतिशास्त्र के बिना सम्पूर्ण लोक–व्यवहार संभव नही है। भारवि विरचित 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है। किरातार्जुनीयम् महाकाव्य न केवल सामान्य पाठ्क के मानस को आह्लादित करता है अपितु मानव जीवन को उदात्त बनाने वाले कई मूल्यों एवं आदर्शों को भी प्रस्तुत करता हैं।

छठवीं शताब्दी के संस्कृत महाकाव्य के रचनाकार महाकवि भारवि कृत किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में नारी का चित्रण अत्यन्त सशक्त रूप से व्यक्त किया गया है। इनकी रचना अर्थगौरव पूर्ण है। नारी ईश्वर की एक अद्वितीय कृति है। नारी के अभाव मे सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वह एक ऐसा छायादार वृक्ष है, जिसकी छाया तले प्रत्येक प्राणी अपनी व्यथा को भूल जाता है। नारी श्रद्धा है, आदि शक्ति है, पवित्रता है, शालीनता है, सद्गुणों की खान है। नारी समाज और राष्ट्र की संरचना के योगदान में महत्वपूर्ण पतिव्रता दायित्व का निर्वहन करती है।

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की कथा–वस्तु महाभारत के वनपर्व से ली गयी है। इस महाकाव्य में नारी पात्र के रूप में द्रौपदी का वर्णन आया है। द्रौपदी का परिचय प्रथम सर्ग में युधिष्ठिर के साथ और तृतीय सर्ग में अर्जुन के साथ संवाद के रूप में आया है। वनेचर द्वारा युधिष्ठिर को बताये गये समाचार को जब द्रौपदी सुनती है तो द्रोपती शत्रुओं की सफलता को सुनकर, अपनों की विफलता को देखकर उसमें क्रोध उद्दीप्त हो जाता है और युधिष्ठिर से कहती है–

भवादृशेषु प्रमादाजनोदितं भवत्यधिक्षेप इवानुशासनम्।
तथापि वस्तुं व्यवसाययन्ति मां निरस्तनारीसमयादुराधयः।।[4]

यद्यपि आप जैसे लोगों के लिए स्त्रीजनों द्वारा उपदेश किये हुये वचन अपमान के समान है। फिर भी स्त्रियोंचित शालीनता को विनष्ट कर देने वाली दुष्ट मनोव्याथायें मुझे बोलने के लिए प्रेरित कर रहीं है। नारी के अभाव में यह सम्पूर्ण संसार सार–शून्य है। समस्त प्राचीन संस्कृत साहित्य में नारी सदैव गरिमा, गौरव और सम्मान की पात्र रही है। लेकिन द्रौपदी के इन वचनों से सिद्ध होता है कि उस समय पुरूष स्त्रियों के वचनों को सुनना पसन्द नहीं करते थे। परन्तु द्रौपदी अपने साहस को दिखाते हुये अपनी बात को व्यक्त करना अपना कर्त्तव्य समझी और समाज को एक नई दिशा दिखाई। और आगे द्रौपदी शत्रुओं की सफलता को सुनकर खुद पर नियन्त्रण पाने में असमर्थ महाराज युधिष्ठिर के क्रोध को उद्दीप्त करते हुये बोली है–

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।

---

[3] शुक्रनीतिसार 1/11
[4] किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग का 28वां श्लोक।

प्रविष्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधानसंवृताङ्गान्निशिता इवेषवः।।[5]

द्रौपदी कहती है हे स्वामी! वे मन्दबुद्धि के लोग जीवन में हमेशा पराभव की प्राप्ति करते हैं जो मायावियों के विषय में मायावी नहीं होते हैं। धूर्त लोग अपनी शालीनता की चादर ओढ कर उनका वध कर देते हैं। इसलिए व्यक्ति को आवश्यकतानुसार अपने स्वभाव को बदल लेना चाहिए। प्रस्तुत श्लोक से द्रौपदी के बुद्धिमती होने का तथा नीतिशास्त्र में पारंगत होने का बोध होता है। तथा आगे द्रौपदी राजा को कर्त्तव्या का पालन करने के लिए उपदेश देती हुई कहती हैं–

अबन्धयकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः।
अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्वषादरः।।[6]

अर्थात् जो व्यक्ति सफल क्रोध वाला होता है और दान द्वार इष्टजन की आपत्ति को मिटाने वाला होता है, ऐसे पुरूष को शत्रु और मित्र दोनों वश में रहते हैं, और जो क्रोधरहित होता है उससे कोई नहीं डरता, और कोई आदर भी नही करता। इस प्रकार द्रौपदी अपने वचनो से अपने व्यक्तित्व का आदर्श प्रकट करती है कि वह कितनी सशक्त मजबूत दृढ़ और बुद्धिमती नारी है। द्रौपदी आगे महाराज युधिष्ठिर को अपने राज्य को अपने हाथों से गवाने वाली उलाहना देते हये कहती है।–

अखण्डमाखण्डलतुल्यधामभिश्चिरं धृता भूपतिभिः स्ववंशजैः।
त्वयात्महस्तेन मही मदच्युता, मतङ्जेन स्रगिवापवर्जिता।।[7]

कि इन्द्र के समान पराक्रम रखने वाली, अपने वंश में उत्पन्न भूपतियों द्वारा चिरकाल तक इस अखण्ड भूमि पर शासन करते हुये पृथ्वी को अपने हाथों से गवा दिया। जैसे मदमस्त हाथी अपनी सूंड से माला को फेंक देता है, उसी प्रकार द्रौपदी अपने क्रोध पर नियन्त्रण नहीं कर पाती अपने क्रोध को उद्दीप्त करते हुये वह आगे बोलती है–

पुरोपनीतं नृप रामणीयकं द्विजातिशेषेण यदेतदन्धसा।
तदद्य ते वन्यफलाशिनः परं परैति कार्श्य यशसा संग वपुः।।[8]

अर्थात् हे राजन्! आपका यह शरीर पहले में ब्राह्मणों के भोजन से बचे अन्न से सुन्दरता को प्राप्त हुआ था। परन्तु आज जंगली फलों को खाने वाला तुम्हारा वही शरीर अत्यन्त क्रश हो गया है। वह इस प्रकार की सूक्तियों के द्वारा युधिष्ठिर को उलाहना देती है।

[5] किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग का 30वां श्लोक।
[6] किरातार्जुनीयम् महाकव्य के प्रथम सर्ग का 33वां श्लोक।
[7] किरातार्जुनीयम् महाकव्य के प्रथम सर्ग का 29वां श्लोक।
[8] किरातार्जुनीयम् महाकव्य के प्रथम सर्ग का 39वां श्लोक।

उपर्युक्त आधार पर यह सिद्ध होता है कि किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में नैतिक मूल्य तथा लोकव्यवहार सम्बन्धी तत्त्व प्रारम्भिक सर्गों में ही पग–पग पर प्रदर्शित होते हैं। किरातार्जुनीयम् की सूक्तियाँ लोकोक्त्यों के रूप में प्रसिद्ध हो गई हैं, इनके द्वारा कवि की नैतिक मूल्यों में आस्था एवं व्यवहार–कुशलता का सुन्दर परिचय मिलता है। आधुनिकता के दौर में आज हमारा समाज नैतिक पतन की ओर अग्रसर हो रहा है। यदि महाकवि भारवि के 'किरातार्जुनीयम्' का कोई सही ढंग से अध्ययन कर जीवन में उसका अनुसरण करता है तो सदा कल्याणकारी मार्ग पर चलकर अपने जीवन को सार्थक बना सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय नीतिशास्त्र का विकास, डॉ0 राजबली पाण्डेय
2. हिन्दी नीतिकाव्य, भोलानाथ तिवारी
3. शुक्रनीतिसार
4. भारवि कृत ''किरातार्जुनीयम्'' महाकाव्य

जीवन व्यवस्था में नैतिक मूल्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। जीवन में संघर्ष को घटाने और सहयोग को बढ़ाने के लिए मनुष्य अपने बुद्धि–विवेक से ऐसे उदात्त नियमों, आदेशों, सिद्धान्तों, प्रमिमानों और संकल्पों की संरचना करता है, जो उसके जीवन को समुचित गति देने, मार्गदर्शन करने और समायोजन करने में सहायक होते हैं जिनके माध्यम से वह समरस एवं शान्त जीवन जीने में समर्थ हो पाता है। ऐसे नियमों को 'नैतिक मूल्य' कहा जाता है।

'नैतिक मूल्य' दो शब्दों से बना है– नैतिक और मूल्य ये दोनों संस्कृत के शब्द हैं। 'नैतिक' शब्द की उत्पत्ति 'नीति' शब्द से हुई है।

'नीति' शब्द प्रापणार्थक 'नीञ्' धातु के साथ भावार्थक 'क्तिन्' प्रत्यय के योग से बना है। 'नीञ्' धातु का अर्थ है– ले जाना या ले चलना अतः नीति शब्द का अभिप्राय है वे नियम जिन पर चलने से मनुष्य का एहिक आमुष्मिक और सनातन कल्याण हो, समाज में स्थिरता और संतुलन रहे, सब प्रकार से अभ्युदय रहे और विश्व में शान्ति रहे अर्थात् जिन नियमों का पालन करने से व्यक्ति और समाज दोनों का श्रेय हो। पूर्ण रूप से ''नीति वह शास्त्र है, जो शुद्ध तथा अशुद्ध, सत्य तथा असत्य, उचित तथा अनुचित अथवा शुभ–अशुभ के आधार पर मानव–चरित्र का विवेचन करता है।[9]

डॉ0 भोलानाथ तिवारी 'नीति' शब्द को इस प्रकार परिभाषित करते हैं– समाज को स्वस्थ एवं संतुलित पथ पर अग्रसर करने एवं व्यक्ति को धर्म, अर्थ तथा मोक्ष की उचित रीति से प्राप्ति कराने के लिए जिन विधि या निषेधमूलक वैयक्तिक एवं सामाजिक नियमों का विधान देश, काल और पात्र के संदर्भ में किया जाता है उन्हें नीति शब्द से अभिहित करते हैं।[10]

डॉ0 राधाकुष्णन के अनुसार नैतिकता का ज्ञान ही वास्तविक शिक्षा है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि नीतिशास्त्र में उन नियमों और अनुशासनों की विवेचना की जाती है जो व्यक्ति और समाज की स्थिति के कारण भी है और लक्ष्य भी।[11] शुक्रनीति सार में भी कहा गया है।

सर्वलोक व्यवहारस्थितिः नीत्या बिना न हि।

अर्थात् नीतिशास्त्र के बिना सम्पूर्ण लोक–व्यवहार संभव नही है। भारवि विरचित 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि है। किरातार्जुनीयम् महाकाव्य

[9] डॉ0 राजबली पाण्डेय, भारतीय नीतिशास्त्र का विकास पृ0 1
[10] भोलानाथ तिवारी हिन्दी नीति काव्य, पृष्ठ, 4
[11] शुक्रनीतिसार 1/11

न केवल सामान्य पाठ्क के मानस को आह्लादित करता है अपितु मानव जीवन को उदात्त बनाने वाले कई मूल्यों एवं आदर्शों को भी प्रस्तुत करता हैं।

छठवीं शताब्दी के संस्कृत महाकाव्य के रचनाकार महाकवि भारवि कृत किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में नारी का चित्रण अत्यन्त सशक्त रूप से व्यक्त किया गया है। इनकी रचना अर्थगौरव पूर्ण है। नारी ईश्वर की एक अद्वितीय कृति है। नारी के अभाव मे सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। वह एक ऐसा छायादार वृक्ष है, जिसकी छाया तले प्रत्येक प्राणी अपनी व्यथा को भूल जाता है। नारी श्रद्धा है, आदि शक्ति है, पवित्रता है, शालीनता है, सद्गुणों की खान है। नारी समाज और राष्ट्र की संरचना के योगदान में महत्वपूर्ण पतिव्रता दायित्व का निर्वहन करती है।

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की कथा–वस्तु महाभारत के वनपर्व से ली गयी है। इस महाकाव्य में नारी पात्र के रूप में द्रौपदी का वर्णन आया है। द्रौपदी का परिचय प्रथम सर्ग में युधिष्ठिर के साथ और तृतीय सर्ग में अर्जुन के साथ संवाद के रूप में आया है। वनेचर द्वारा युधिष्ठिर को बताये गये समाचार को जब द्रौपदी सुनती है तो द्रोपती शत्रुओं की सफलता को सुनकर, अपनों की विफलता को देखकर उसमें क्रोध उद्दीप्त हो जाता है और युधिष्ठिर से कहती है–

भवादृशेषु प्रमादाजनोदितं भवत्यधिक्षेप इवानुशासनम्।
तथापि वस्तुं व्यवसाययन्ति मां निरस्तनारीसमयादुराधयः।।[12]

यद्यपि आप जैसे लोगों के लिए स्त्रीजनों द्वारा उपदेश किये हुये वचन अपमान के समान है। फिर भी स्त्रियोंचित शालीनता को विनष्ट कर देने वाली दुष्ट मनोव्याथायें मुझे बोलने के लिए प्रेरित कर रहीं है। नारी के अभाव में यह सम्पूर्ण संसार सार–शून्य है। समस्त प्राचीन संस्कृत साहित्य में नारी सदैव गरिमा, गौरव और सम्मान की पात्र रही है। लेकिन द्रौपदी के इन वचनों से सिद्ध होता है कि उस समय पुरूष स्त्रियों के वचनों को सुनना पसन्द नहीं करते थे। परन्तु द्रौपदी अपने साहस को दिखाते हुये अपनी बात को व्यक्त करना अपना कर्त्तव्य समझी और समाज को एक नई दिशा दिखाई। और आगे द्रौपदी शत्रुओं की सफलता को सुनकर खुद पर नियन्त्रण पाने में असमर्थ महाराज युधिष्ठिर के क्रोध को उद्दीप्त करते हुये बोली है–

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।
प्रविष्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधानसंवृताङ्गान्निशिता इवेषवः।।[13]

[12] किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग का 28वां श्लोक।
[13] किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग का 30वां श्लोक।

द्रौपदी कहती है हे स्वामी! वे मन्दबुद्धि के लोग जीवन में हमेशा पराभव की प्राप्ति करते हैं जो मायावियों के विषय में मायावी नहीं होते हैं। धूर्त लोग अपनी शालीनता की चादर ओढ कर उनका वध कर देते हैं। इसलिए व्यक्ति को आवश्यकतानुसार अपने स्वभाव को बदल लेना चाहिए। प्रस्तुत श्लोक से द्रौपदी के बुद्धिमती होने का तथा नीतिशास्त्र में पारंगत होने का बोध होता है। तथा आगे द्रौपदी राजा को कर्त्तव्या का पालन करने के लिए उपदेश देती हुई कहती हैं–

अबन्धयकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः।
अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्वषादरः।।[14]

अर्थात् जो व्यक्ति सफल क्रोध वाला होता है और दान द्वार इष्टजन की आपत्ति को मिटाने वाला होता है, ऐसे पुरूष को शत्रु और मित्र दोनों वश में रहते हैं, और जो क्रोधरहित होता है उससे कोई नहीं डरता, और कोई आदर भी नही करता। इस प्रकार द्रौपदी अपने वचनो से अपने व्यक्तित्व का आदर्श प्रकट करती है कि वह कितनी सशक्त मजबूत दृढ़ और बुद्धिमती नारी है। द्रौपदी आगे महाराज युधिष्ठिर को अपने राज्य को अपने हाथों से गवाने वाली उलाहना देते हये कहती है।–

अखण्डमाखण्डलतुल्यधामभिश्चिरं धृता भूपतिभिः स्ववंशजैः।
त्वयात्महस्तेन मही मदच्युता, मतङ्जेन स्रगिवापवर्जिता।।[15]

कि इन्द्र के समान पराक्रम रखने वाली, अपने वंश में उत्पन्न भूपतियों द्वारा चिरकाल तक इस अखण्ड भूमि पर शासन करते हुये पृथ्वी को अपने हाथों से गवा दिया। जैसे मदमस्त हाथी अपनी सूंड से माला को फेंक देता है, उसी प्रकार द्रौपदी अपने क्रोध पर नियन्त्रण नहीं कर पाती अपने क्रोध को उद्दीप्त करते हुये वह आगे बोलती है–

पुरोपनीतं नृप रामणीयकं द्विजातिशेषेण यदेतदन्धसा।
तदद्य ते वन्यफलाशिनः परं परैति कार्श्य यशसा संग वपुः।।[16]

अर्थात् हे राजन्! आपका यह शरीर पहले में ब्राह्मणों के भोजन से बचे अन्न से सुन्दरता को प्राप्त हुआ था। परन्तु आज जंगली फलों को खाने वाला तुम्हारा वही शरीर अत्यन्त क्रश हो गया है। वह इस प्रकार की सूक्तियों के द्वारा युधिष्ठिर को उलाहना देती है।

[14] किरातार्जुनीयम् महाकव्य के प्रथम सर्ग का 33वां श्लोक।
[15] किरातार्जुनीयम् महाकव्य के प्रथम सर्ग का 29वां श्लोक।
[16] किरातार्जुनीयम् महाकव्य के प्रथम सर्ग का 39वां श्लोक।

उपर्युक्त आधार पर यह सिद्ध होता है कि किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में नैतिक मूल्य तथा लोकव्यवहार सम्बन्धी तत्त्व प्रारम्भिक सर्गों में ही पग–पग पर प्रदर्शित होते हैं। किरातार्जुनीयम् की सूक्तियाँ लोकोक्त्यों के रूप में प्रसिद्ध हो गई हैं, इनके द्वारा कवि की नैतिक मूल्यों में आस्था एवं व्यवहार–कुशलता का सुन्दर परिचय मिलता है। आधुनिकता के दौर में आज हमारा समाज नैतिक पतन की ओर अग्रसर हो रहा है। यदि महाकवि भारवि के 'किरातार्जुनीयम्' का कोई सही ढंग से अध्ययन कर जीवन में उसका अनुसरण करता है तो सदा कल्याणकारी मार्ग पर चलकर अपने जीवन को सार्थक बना सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय नीतिशास्त्र का विकास, डॉ0 राजबली पाण्डेय
2. हिन्दी नीतिकाव्य, भोलानाथ तिवारी
3. शुक्रनीतिसार
4. भारवि कृत ''किरातार्जुनीयम्'' महाकाव्य